श्रृंखला — 1

शोधपरक् प्रगति विवरण

सामान्यतः यह देखा गया है कि 'धर्म/अध्यात्म' से जुड़ा व्यक्ति या 'साधक/साधिका' जो दैनिक पूजा/अर्चना करते हैं, उसका कोई निश्चित विधि/विधान नहीं है। सनातनी परम्परा या अन्य उसके तारतम्य से जुड़ी परंम्परा के अन्तर्गत, व्यक्ति 'साधक/साधिका' जब कुछ दिनों या लम्बे अन्तराल तक दैनिक पूजा या साधना कर लेता है और अपने वांछित 'लक्ष्य/साध्य' से किसी न किसी कारण से वंचित रह जाता है तो वह उसके सम्बन्ध में तथाकथित विज्ञजनों से कारण जानना चाहता है। 'धर्म/ अध्यात्म' से जुड़े विज्ञजन उसे अपना अनुभव या विद्वता को समझा कर उसका वर्तमान गुरु या मार्गदर्शक बन जाते है।

लम्बे समय तक जब उसके 'अन्तः बाह्य' का भटकाव दूर नहीं हो पाता है तो वही तथाकथित मार्गदर्शक उसके पात्रता या प्रयास पर प्रश्नचिन्ह लगाकर उससे दूर भागने लगते हैं। इस भ्रमयुक्त कम में 'धर्म/अध्यात्म' का आपेक्षित पड़ाव उससे कोसों दूर चला जाता है। ऐसी विषम स्थिति में वह भी भ्रमित होकर तथाकथित 'आस्था/अनास्था' के मध्य भटकने लगता है।

प्रश्न यह उठता है कि – 'धर्म/अध्यात्म' के अतिव्यापक और असीमित – अनन्तगामी कैनवास में व्यक्ति 'साधक/साधिका' प्रवेश कैसे करे ?' इसी के साथ – साथ हर व्यक्ति के 'अन्तः बाह्य' में एक स्वाभाविक 'प्रश्नचिन्ह' उत्पन्न होता है कि – इन सबका मापदण्ड क्या होगा ?

हर 'धार्मिक /आध्यात्मिक' व्यक्ति के 'अन्तः बाह्य' में यह जिज्ञाशा स्वतः अंकुरित/ प्रस्फुटित होती रहती है कि – 'साधना के निरंतर क्रमिक क्रम में हमें कैसे पता चलेगा कि आध्यात्मिक शक्तियां हमारे निकट हैं या हमसे बहुत दूर हैं। फिर उससे जुड़नें के लिए सही मार्ग क्या होगा ?' – इसी उतार – चढ़ाव में अधिकांश व्यक्ति अपना पूरा का पूरा जीवन लगा देता है। अन्त में थक हार कर अपने जीवन के अन्तिम पड़ाव पर स्वतः के कुबड़ेपन को लेकर यह सोचने के लिए विवश हो जाता है कि – 'कहीं हमारे आध्यात्मिक यात्रा का आरम्भ ही तो गलत नहीं था'।

उपरोक्त भ्रमयुक्त और उलझावपूर्ण 'धार्मिक/आध्यात्मिक' परिस्थितियों से पूर्णतः उबरने के लिए यह 'अज्ञानाश्रय ट्रस्ट ' निरंतर प्रयत्नशील है। इस 'मेटाफिजिकल – एकेडमिक ट्रस्ट' का आरम्भिक कार्य ही यह है कि – भौतिकता और आध्यात्मिकता के मध्य एक ऐसे सेतुबन्ध की स्थापना की जाय जो निरंतर किसी न किसी रूप में मानव और – उससे जुड़ी मानवता से कोई न कोई समन्वय स्थापित करता रहे। वही तथाकथित

'मेटाफिजिकल' कम में 'भौतिकता और आध्यात्मिकता' के मध्य आध्यात्मिक ऊर्जा एक ऐसा तारतम्य स्थापित करती है जिससे व्यक्ति 'साधक/ साधिका' वह सब अपने अन्तः चक्षु से देखने या अन्तः बाह्य में अनुभव करने लगता है जो सामान्य व्यक्ति के लिए दुर्लभ या असम्भव है। लेकिन इस कम परम्परा से जुड़ने के लिए उसे एक अदद 'देवत्व' की आवश्यकता पड़ती है।

भौतिकता के बृहद कैनवास में किसी भी व्यक्ति या 'साधक/साधिका' को साधना के किसी भी कम से जुड़ने के लिए सबसे पहले अपने 'माता – पिता' और प्रथम गुरु से जुड़ने का प्रयास करना चाहिए । यह तीनों व्यक्ति भौतिकता के अन्तर्गत उसके लिए 'त्रिदेव' के समान हैं। इन त्रयी महाशक्तियों से सही मायने में जुड़ने के उपरान्त, उसके लिए साधना का वह मार्ग प्रशस्त हो जाता है, जो उसे आध्यात्मिकता की ओर ले जाने में हर तरह से सहायक सिद्ध होगा। अब प्रश्न यह उठता है कि पृथिवी के इन तीनों भौतिक देवता से व्यक्ति सही मायने में कैसे जुड़े ? – यह अतिविचारणीय प्रश्न है ।

भौतिकता के अन्तर्गत, 'माता – पिता और प्रथम गुरु'– ऐसे त्रयी देवता हैं जो 'मेटाफिजिकल' कम में निरंतर आध्यात्मिक ऊर्जा संग्रहित और विसर्जित करते रहते हैं। आध्यात्मिक ऊर्जा का संग्रह केन्द्र उनके मस्तिष्क के मध्य का शिखा स्थल होता है और उसके विसर्जन का स्रोत उनके दोनों पैरों के अंगूठे का ऊपरी नाखून होता है। सम्भवतः इसी कम के अन्तर्गत पैर छूने की परंपरा विकसित हुई होगी।

कोई भी व्यक्ति या साधक/ साधिका, जो आध्यात्मिक कम में साधना आरम्भ करना चाहता है उसे चाहिए कि उससे पूर्व अपनी पात्रता को विकसित करने के लिए 'माता – पिता और प्रथम गुरु' को निम्नकम में प्रसन्न करने का प्रयास करे –

1.प्रतिदिन सोकर उठने के उपरान्त, इन तीनों का चरण स्पर्श करे। उसी कम में रात्रि विश्राम से पूर्व इन तीनों भौतिक महाशक्तियों का चरण स्पर्श करे। इस अनवरत् कम को कम से कम तीन माह तक पूरा करने के उपरान्त उसे साधना आरम्भ करनी चाहिए।

2. 'माता – पिता और प्रथम गुरु' को हर तरह से प्रसन्न रखने के लिए उसे हर सम्भव प्रयास करना चाहिए। इन प्रयासों में उसे किसी भी प्रकार के लाभ – हानि को समावेशित नहीं करना चाहिए। क्योंकि यही पात्रता उसके तथाकथित साधना के लक्ष्य को निर्धारित करेगा।

3. 'माता – पिता और प्रथम गुरु' में, यदि कोई जीवित नहीं है तो उसे उनकी प्रतिमा को सामने रखकर उनकी पूजा/अर्चना करके उसे साधना के मार्ग में आगे बढ़ने का प्रयास करना चाहिए।

उपरोक्त त्रयी बिन्दुओं से सम्बन्धित व्यक्ति को 'भौतिक देवता' कहने पर निश्चित रूप से विज्ञ समाज या 'धार्मिकता/आध्यात्मिकता' से जुड़े व्यक्तियों के अन्तः

प्रकिया में 'माता' के सुख और असह्य कष्ट का अनुभव विश्व में कोई दूसरा नहीं कर सकता है। चाहे, वह 'देवतत्व ' ही क्यों न हो'।

उपरोक्त क्रम को ध्यान में रखते हुए कोई भी व्यक्ति 'माता' की उपेक्षा करके 'भौतिकता/आध्यात्मिकता' के मध्य रचनात्मक रस्ता ढूंढ़ – खोज ले, यह असम्भव सा है।

2.पिता – किसी भी व्यक्ति के अस्तित्व को आकार देने का श्रेय पिता को होता है। प्रकृति का कोई भी अंश पुरुष या देवतत्व के बिना अधूरा रहता है। प्रकृति में जब तक अंकुरण होता है तब तक वह उर्वरा रहती है।

माता के गर्भ यानी प्रकृति में सूक्ष्मतत्व का प्रवेश पिता के माध्यम से होता हैं। बच्चे के जन्म के उपरान्त पिता का संरक्षण ऐसे छाता के रूप में होता है जो उसे हर झंझावातों से किसी न किसी रूप में निरंतर मुक्ति देता रहता है।

बच्चे के बहुमुखी विकास में 'माता – पिता' का बराबर का योगदान होता है। इन दोनों के किसी भी प्रकार का तुलनात्मक अध्ययन सम्भव नहीं है। क्योंकि दोनों के रचनात्मक सहयोग से ही बच्चा बड़ा होकर ऐसे मानव का स्वरूप धारण करता है जिसमें उसके 'माता – पिता' की सामूहिक कृति निरंतर किसी न किसी रूप में झलकती रहती है। इसलिए व्यक्ति के लिए, यदि 'माता' भौतिक देवी के रूप में परिलक्षित होती है तो पिता भौतिक 'देवता' के रूप में।

3. गुरु – गुरु का स्थान, बच्चे के लिए कितना महत्वपूर्ण है इसका मूल्यांकन करना सरल नहीं है। बच्चे का पहला गुरु जो उसे अक्षर ज्ञान देता है वह उसके लिए आजीवन पूज्यनीय है। क्योंकि बच्चे को अक्षर ज्ञान देते समय गुरु का 'अन्तःबाह्य' निरंतर यह सोचता रहता है कि – यह बच्चा बड़ा होकर अपने अन्तः के बहुमुखी संस्कारों की रक्षा करने में पूर्णतः सक्षम होगा। इसलिए "माता – पिता' और गुरु' के सामूहिक प्रयास से ही बच्चे का बहुमुखी विकास हर तरह से सम्भव है।

उपरोक्त त्रयी विवेचना का संक्षिप्त रूप प्रस्तुत करने के उपरान्त, यह कहना सार्थक होगा कि – व्यक्ति 'साधक/साधिका' के साधना क्रम में 'माता – पिता और गुरु ' का स्थान भौतिक क्रम में 'देवी/देवता' से किसी भी मायने में कम नहीं है। इन त्रयी विभूतियों की धार्मिक/आध्यात्मिक विवेचना का संक्षिप्त क्रम निम्न प्रकिया के अन्तर्गत प्रस्तुत किया जा सकता है –

'सृष्टि के आरम्भ में देवतत्व के व्यापक समूह से 'मानव' जाति की उत्पत्ति हुई। उसके उपरान्त, निरंतर 'मानव' श्रृंखला का संवर्द्धन और बहुमुखी विकास होता चला गया। 'जन्म, मृत्यु और जन्म' के क्रमिक क्रम में असंख्य – असंख्य मानव के उत्पत्ति का नियामक और प्रथम स्रोत 'ईश्वरतत्व' का अति व्यापक समूह/महासमूह ही रहा होगा। ऐसे

उपरोक्त क्रम में त्राटक के अभ्यास के साथ उसे 'पारेन्द्रिय विद्या' का आवश्यक अभ्यास निम्नक्रम में करना चाहिए –

1.शवासन, पद्मासन और सिद्धासन करने के उपरान्त, उसे पारेन्द्रिय विद्या का नियमित रूप से दैनिक अभ्यास करना चाहिए।

2.पारेन्द्रिय विद्या, एक ऐसी विद्या है जिसके माध्यम से व्यक्ति सुदूर स्थित किसी व्यक्ति या वस्तु के विषय में आवश्यक जानकारी प्राप्त कर सकता हैं। इस विद्या से गहराई से जुड़ने के लिए व्यक्ति को ध्यानमार्ग का भी सशक्त अभ्यास होना चाहिए।

3. ध्यानमार्ग और पारेन्द्रिय विद्या का समन्वयात्मक स्वरूप का दैनिक सशक्त अभ्यास, व्यक्ति 'साधक/साधिका' को इतना समर्थ और सशक्त बना देता है जिससे वह सुदूर स्थित दूसरे व्यक्ति या समस्यायुक्त के विषय में काफी कुछ जान समझ लेता है।

4. साधना के वास्तविक परिप्रेक्ष्य को गहराई से जानने समझने के लिए 'पारेन्द्रिय विद्या' का समुचित ज्ञान और अभ्यास अति आवश्यक है। यही वह सही मार्ग है जिससे व्यक्ति 'आत्मा और परमात्मा' के वास्तविक और रचनात्मक स्वरूप को जानने समझने का प्रयास कर सकता है।

5. पारेन्द्रिय विद्या के माध्यम से व्यक्ति किसी भी धर्म/मजहब से सम्बन्धित 'महाशक्ति' से जुड़ने का प्रयास कर सकता है।

उपरोक्त क्रमों को ध्यान में रखते हुए, यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि – व्यक्ति को किसी भी ईश्वरीय 'शक्ति/महाशक्ति' की साधना आरम्भ करने से पूर्व 'माता – पिता और प्रथम गुरु' का यथोचित सम्मान और सेवा करना, आवश्यक योगाभ्यास करना और पारेन्द्रिय विद्या का समुचित ज्ञान प्राप्त करना आवश्यक ही नहीं बल्कि उससे साधना का समुचित मार्ग प्रशस्त होता है।

उपरोक्त उचित मार्ग पर चलते हुए व्यक्ति 'साधक/साधिका' साधना की किसी भी ऊच्च स्थिति को प्राप्त कर सकता है। साधना के इस क्रमिक मार्ग में व्यक्ति के अन्तः बाह्य की सोच का क्रम निम्न होना चाहिए –

1.यदि वह अपने 'अन्तः बाह्य' में साधना के क्रम में आनन्द या परमानन्द को खोजने ढूढ़ने लगेगा तो उसकी साधना का आपेक्षित प्रतिफल किसी न किसी रूप में आत्मकेन्द्रित होने लगेगा। ऐसे में, उसके अन्तः में अहंकार या सर्वोच्चता का प्रस्फुटन होना स्वाभाविक है।

2. व्यक्ति 'साधक/साधिका' को 'सकाम' और 'निष्काम' – दोनों तरह की साधना करनी चाहिए। अपने ईष्ट या अभिष्ट महाशक्तियों की साधना उसे 'निष्काम' क्रम में करनी चाहिए। उसमें वह स्वः आनन्द का अनुभव कर सकता है।

'संस्कार' आदि का संतुलन जब रचनात्मक होगा तो व्यक्ति न चाहते हुए भी असाधुकृत्य से हटकर साधुकृत्य से जुड़ने का हर सम्भव प्रयास करेगा।

उपरोक्त शोधपरक वक्तव्य और सारगर्भित सोच से इतना तो स्पष्ट हो गया है कि – व्यक्ति 'साधक/साधिका' को 'धार्मिक/आध्यात्मिक' कम में साधना करने के पूर्व एक ऐसा पड़ाव निर्मित करना होगा जो उसके आगामिक यात्रा के अधिकांश रूकावटों या अवरोधों को निर्मूल करने में सक्षम हो सके।

जटा जूट बढ़ाकर बड़े – बड़े मन्त्रों को लम्बे चौड़े उट पटांग स्थलों पर जपने से व्यक्ति की साधना नहीं पूरी होती है। जहां तक बल प्रयोग का प्रश्न है वहां निम्न सोच सार्थक लगती है –

1.एक बड़े गुण्डे – मवाली के पास भी बल और असाधुकृत्यों से सम्बन्धित शक्ति होती है। जिसे पैशाचिक शक्ति भी कहा जा सकता है। लेकिन उसके कार्य करने या बल प्रयोग करने की प्रक्रिया 'अधार्मिक, पैशाचिक और असामाजिक' होती है।

2.एक सशक्त पहलवान के पास भी बल और कई व्यक्तियों के बराबर शक्ति होती है। लेकिन वह अपना बल प्रयोग किसी दूसरे सक्षम व्यक्ति के चुनौती या विविध प्रतिस्पर्द्धा के अन्तर्गत करता है। इस बल प्रयोग में सामाजिक 'न्याय और अन्याय' – दोनों की सम्भावना हो सकती है। क्योंकि इसमें स्वः नियंत्रण की क्षमता कम होती है।

3. व्यवस्था सम्बन्धी विविध अधिकारी 'पुलिस – प्रशासन, न्याय सम्बन्धी न्यायकर्ता आदि' के पास भी बल और शक्ति – दोनों होती है। उसमें से अधिकांश अधिकारी अपने तथाकथित 'बल और शक्ति' का प्रयोग करके 'सत्य और न्याय' के परिप्रेक्ष्य में विविध विकृत समाज को अपने अपने ढंगकम से सुधारने का प्रयास करते है। अब यह बात दूसरी है कि वह लोग इस जटिल कार्य में कितना सफल और सक्षम हो पाते हैं। क्योंकि इनके पास भौतिकता तो है लेकिन उसी के अनुपात में आध्यात्मिकता का अभाव भी है।

4. एक व्यक्ति 'साधक/साधिका' जो 'भौतिकता और आध्यात्मिकता' – दोनों से जुड़ा है यानी उसके साधना का कम 'मेटाफिजिकल' व्यवस्था के अन्तर्गत है वह अपने बल और स्वः अर्जित शक्ति का उपयोग सृष्टि की अव्यवस्था को सार्थक और लोकप्रिय व्यवस्था के स्थायित्व के लिए करता है। लेकिन सृष्टि के सापेक्ष में यह रचनात्मक कार्य वही कर पाता है जो 'सकाम' और 'निष्काम' साधना में बराबर की दखल रखने की क्षमता रखता हो।

उपरोक्त कम में 'बल और शक्ति' को ध्यान में रखते हुए यह प्रामाणिक आधार पर कहा जा सकता है कि – 'जिस तरह से एक छोटे से बीज से विशाल वृक्ष का निर्माण होता है, जिस तरह से एक बूंद वीर्य से एक सक्षम/सशक्त व्यक्ति का निर्माण होता है, जिस तरह से असंख्य सूक्ष्म से सूक्ष्म कणों से प्रकृति के तमाम अवयवों का निर्माण

3.' ॐ नमः शिवाय'।

(विशेष – यह शैव परंपरा का छह अक्षर का मन्त्र है। इस मन्त्र के ऋषि – वामदेव, छन्द – पंक्ति और देवता – सदाशिव हैं।)

कतिपय ऐसे भी अति प्रभावशाली मन्त्र अति आवश्यक हैं जिनमें एक से अधिक ऋषि हैं, एक से अधिक छन्द हैं और एक से अधिक देवता। ऐसे अति प्रभावशाली मन्त्रों को निम्न क्रम में प्रस्तुत किया जा सकता है –

1.'ऐं ह्रीं क्लीं चामुण्डायै विच्चे'।

(विशेष – यह भगवती दुर्गा का 9 अक्षर का मन्त्र है। इस मन्त्र के ऋषि – ब्रह्मविष्णुरुद्र, छन्द – गायत्र्युष्णिगनुष्टुप और देवता – श्रीमहाकाली महासरस्वती महालक्ष्मी हैं।)

2.' ॐ हौं ॐ जूं सः भूर्भुवः स्वः त्र्यम्बकं यजामहे सुगन्धिं पुष्टि वर्धनं, उर्वारुकमिव बन्धनान्मृ –त्योर्मूक्षीय मामृतात् भूर्भुवः स्वरों जूं सः हौं ॐ'।

(विशेष – यह शैव परंपरा का 51 अक्षर का मन्त्र है। इसे 'महामृत्युंजय' मन्त्र कहते हैं। इस मन्त्र के ऋषि – वामदेव, कहोल और वसिष्ठ, छन्द – पंक्ति, गायत्री और अनुष्टुप, देवता – सदाशिव, महामृत्युंजय और रुद्र हैं।)

उपरोक्त मन्त्रों के आकार – प्रकार और 'ऋषि, छन्द और देवता' के आधिक्य को देखकर सामान्यतः व्यक्ति 'साधक/साधिका' के अन्तः मन में यह अवश्य आयेगा कि – उन्हीं मन्त्रों का जप ध्यान किया जाय जो अति प्रभावशाली मन्त्र हैं या जिनमें 'ऋषि, छन्द और देवता' आदि का आधिक्य है। लेकिन उनका यह सोचना 'साधना' के क्रम में सार्थक नहीं है।

सामान्यतः विज्ञ धर्माचार्यों और सिद्ध साधकों ने मन्त्रों को निम्न तीन वर्गों में विभक्त किया है –

1.बीजमन्त्र – दस अक्षरों तक के मन्त्र को 'बीजमन्त्र' कहते हैं।

2. मन्त्र – ग्यारह से बीस अक्षरों तक के मन्त्र को 'मन्त्र' कहते हैं।

3. मालामन्त्र – बीस से अधिक अक्षरों तक के मन्त्र को 'मालामन्त्र' कहते हैं।

सामान्य क्रम में व्यक्ति 'साधक/साधिका' को 'पारेन्द्रिय क्रम ' में साधना के लिए 'बीजमन्त्र' का चयन किसी योग्य और सिद्ध साधक के निर्देशन और संरक्षण में करना चाहिए। 'बीजमन्त्र' की संरचना और उपयोगिता को समझते हुए उसका चयन करना चाहिए । बीजमन्त्रों का संक्षिप्त विवरण और उनकी सार्थकता को निम्नक्रम में प्रस्तुत किया जा सकता है –

प्रणव –मन्त्र 'ब्रह्म का शब्द रूप है और बीजमन्त्र उसके विभिन्न सगुण देवतात्मक स्वरूप हैं। 'ॐ ' को 'अ, उ और म' – इन तीन वर्णों से बना माना जाता है, लेकिन इसका अर्थ यह नहीं है कि आदि – ध्वनि इन वर्णों या इनके सम्मिश्रण जैसी थी क्योंकि ये वर्ण तो आदि – ध्वनि से विकसित होते हैं। इसके पहले भी आदि ध्वनि होती है। इसका तात्पर्य यह है कि 'ॐ ' का जो स्थूल शब्द स्थूल कानों से सुना जाता है, वह उक्त वर्णों की सन्धि या मिश्रण का फल है। अतः 'ॐ ' शब्द नाभि से विकास पाकर क्रमिक कम में और गम्भीर उत्थानपूर्वक अग्रसर होता हुआ नासिका के ऊर्ध्व भाग में, जहां चन्द्रबिन्दु ध्वनित होता है, समाप्त होता है।

वर्ण – संख्या के आधार पर मन्त्रों के विभिन्न नाम हैं। बीजमन्त्र वह मन्त्र है जिसमें केवल एक वर्ण हो। सामान्यतः सभी मन्त्रों की समाप्ति चन्द्र – बिन्दु से होती है। इसी क्रम में यहां एक दूसरा वर्ण भी विद्यमान है। क्योंकि स्वर का उच्चारण इस प्रकार का हो ही नहीं सकता कि वह पूर्ण रूप से समाप्त हो जाये। इसके लिए व्यजंन की सहायता ली जाती है क्योंकि व्यंजन का कार्य ही है – स्वर की ध्वनि को रोकना। व्यंजन का उच्चारण स्वर के बिना नहीं हो सकता और इसी से स्वर को व्यंजन की शक्ति माना जाता है।

बीज – समापक 'म्' नासिका के अन्तराल में ऊर्ध्व भाग में ही उच्चरित होता है और होठों तक कभी नहीं पहुंच पाता। अन्य सभी वर्णों में 'पंचमहाभूत' (आकाश, वायु, अग्नि, जल और पृथिवी) में से एक न एक भूत की प्रधानता रहती है। जिस वर्ण में किसी भूत का आधिक्य होता है, उसे 'प्रश्वासपूर्वक' कहा जाता है और जिसमें न्यूनता होती है, 'निःश्वासपूर्वक। बीज की परि – समाप्ति के लिए 'म्' चुना जाता है क्योंकि इसमें पांचों भूत साम्यावस्था में विद्यमान रहते हैं।

प्रत्येक 'देवता' या विविध ईश्वरीय सूक्ष्मों के समूह का कोई न कोई 'बीज' होता है। किसी भी देवी या देवता की पूजा/अर्चना में जो मन्त्र मुख्यतया प्रयुक्त होता है, वह उसका 'मूलमन्त्र' कहा जाता है। प्रत्येक वर्ण, अक्षर और मन्त्र 'ब्रह्म' का ही रूप है और यही बात मूर्ति तथा मन्त्र की रेखाओं और संसार के समस्त पदार्थों के सम्बन्ध में लागू होती है।

'हँ, यँ, रँ, लँ और वँ ' – पंचभूतों के बीज हैं। जहां एक से अधिक वर्ण होते हैं वहां प्रत्येक बीज का अपना – अपना अर्थ होता है। 'वरदा तन्त्र' (छठां अध्याय) में आये 12 बीज – मन्त्रों को निम्न कम में प्रस्तुत किया जा सकता है –

1. 'हौं' – इस 'बीजमन्त्र' में तीन वर्ण 'ह, औ और ँ ' है। इनका अर्थ निम्न हो सकता है–

ह – शिव, औ – सदाशिव और ँ – दुःख दूर करता है।

9. 'गँ' – इस 'बीजमन्त्र' में आये वर्णों का निम्न अर्थ हो सकता है –

ग – गणेश और बिन्दु – दुःखहर्ता।

10.'ग्लौं'– इस 'बीजमन्त्र' में आये वर्णों का निम्न अर्थ हो सकता है –

ग – गणेश, ल – व्यापक, अ – तेज, बिन्दु – दुःखहर्ता।

इस बीजमन्त्र से भग0 गणेश की पूजा होती है।

11. 'क्ष्रौं'– इस 'बीजमन्त्र' में आये वर्णों का निम्न अर्थ हो सकता है –

क्ष – नृसिंह, र – ब्रह्म, औ – ऊपर को उठा हुआ दांत, बिन्दु – दुःखहर्ता।

इस बीजमन्त्र से भग0 नसिंह की पूजा होती है।

12. 'स्त्रीं'– इस 'बीजमन्त्र' में आये वर्णों का निम्न अर्थ हो सकता है –

स – कठिनाईयों से छुटकारा, त्र – त्राणकर्ता, र – मोक्ष, ई – महामाया, नाद – विश्वमाता और बिन्दु – दुःखहर्ता।

उपरोक्त 'देवी /देवता' से सम्बन्धित 'बीज' साधना प्रक्रिया के लिए मूलतः सहायक हो सकता है लेकिन 'पारेन्द्रिय विद्या' के कम में क्लिष्टता के कारण बहुत सुविधाजनक हो, यह आवश्यक नहीं है। इसलिए उस कम में व्यक्ति 'साधक/साधिका' को 'पारेन्द्रिय' ध्यान में उन्हीं बीजमन्त्रों का उपयोग करना चाहिए जो श्वांस प्रक्रिया से जुड़ने में सहायक सिद्ध हो। केवल 'ऊँ ' एक ऐसा बीज है जिसका उपयोग, व्यक्ति 'साधक/साधिका' 'पारेन्द्रिय कम' के आरम्भिक यात्रा में स्वतः कर सकता है।

इस साधकीय कम में वह एक ही 'महाशक्ति' से सम्बन्धित साधना में एक से अधिक मन्त्रों का उपयोग कर सकता है। यदि वह साधना के कम में 'क्लीं कालिकायै नमः' मन्त्र का उपयोग करता है तो 'पारेन्द्रिय कम' के अभ्यास या अभिष्ट कार्य हेतु 'श्मशान कालिकायै नमः' मन्त्र का प्रयोग/उपयोग कर सकता है।

'मेटाफिजिकल' कम के अन्तर्गत, आगामिक शोधपरक् विवरण में 'त्राटक और पारेन्द्रिय विद्या' के साथ साधना के विविध उपकम और विविध साधनाओं पर आवश्यक संकेत 'अज्ञानाश्रय ट्रस्ट' द्वारा प्रस्तुत किया जायेगा।

प्रस्तुतकर्ता –'अज्ञानाश्रय ट्रस्ट'

सचिव अध्यक्ष संयोजक